IJNRD.ORG ISSN : 2456-4184
INTERNATIONAL JOURNAL OF NOVEL RESEARCH AND DEVELOPMENT (IJNRD) | IJNRD.ORG
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

# ''हिन्दी साहित्य में प्रकृति–पर्यावरण चेतना व महत्त्व''

**नूतन सोनी**
**सहायक आचार्य (हिन्दी साहित्य)**
**ऐश्वर्या कॉलेज ऑफ एजूकेषन, जोधपुर**

आज मानव जिस सृष्टि में रह रहा है, उस सम्पूर्ण सृष्टि के निर्माण में प्रकृति की अहम् भूमिका है। जहाँ मानव है, वहाँ प्रकृति है, पर्यावरण है, साहित्य है। प्रकृति से ही साहित्य जन्म लेता है, ऐसा कहें तो भी अतिशयोक्ति नहीं होगी। क्योंकि कविमन जैसा अपने आस–पास प्राकृतिक वातावरण व परिस्थितियाँ अनुभूत करता है, उसी से उसकी लेखनी अनुप्राणित होती है। हिन्दी साहित्य के कविवर सुमित्रानन्दन पंत तो 'प्रकृति के सुकुमार कवि' कहे जाते हैं। पन्तजी की अनेक कविताओं यथा–एकतारा, गुंजन, परिवर्तन, बादल, हिमाद्रि, नौका विहार आदि में प्रकृति–पर्यावरण की मनोहर छवियाँ अंकित की गई है। वे स्वयं यह स्वीकार करते है कि कविता करने की प्रेरणा उन्हें प्रकृति निरीक्षण से प्राप्त हुई है। वे कहते है कि –''कविता करने की प्रेरणा मुझे सबसे पहले प्रकृति निरीक्षण से मिली है, जिसका श्रेय मेरी जन्मभूमि कुर्मांचल प्रदेश को है।'' कवि प्रकृति की रूप सुषमा पर इतना मुग्ध है कि नारी सौन्दर्य की भी अवहेलना कर देता है –

छोड़ द्रुमो की मृदु छाया,
जोड़ प्रकृति से भी माया।
बाले तेरे बाल जाल में
कैसे उलझा दूं लोचन ?
भूल अभी से इस जग को।।

प्रकृति–पर्यावरण और मानव जीवन एक–दूसरे के पर्याय है। जहाँ मानव का अस्तित्व पर्यावरण अथवा प्रकृति से है, वहीं मानव द्वारा निरंतर किए जा रहे पर्यावरण के विनाश व दोहन से हमें भविष्य की चिंता सताने लगी है। हमारे प्राचीन वेदों, पुराणों, उपनिषदों, ऋचाओं एवं ग्रंथों में पर्यावरण के महत्त्व को दर्शाया गया है। हिन्दी साहित्य में आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक प्रकृति को हमेशा विशिष्ट स्थान मिला हे। पर्यावरण चेतना की समृद्ध परंपरा हमारे हिन्दी साहित्य में रही है, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक है। गुरु जम्मेश्वर जी (पंद्रहवी शती) ने प्रकृति रक्षा का जो सन्देश समाज में दिया वह आने वाले कवियों और जनता–दोनों के लिए प्रेरणास्त्रोत बना।

**'जीव दया पालणी, रूंख लीलों नहीं घावै।'** जैसे उच्च मानवीय आदर्शों, जीवन मूल्यों तथा पर्यावरणीय मूल्यों के साथ युगचेता गुरु जाम्भोजी ने विश्नोई पंथ की स्थापना की। आज जबकि पूरा विश्व पर्यावरण

सरंक्षण हेतु चिन्तन कर रहा है, गुरु जाम्भोजी ने पर्यावरण के महत्त्व को सैकड़ों वर्ष पूर्व ही पहचान कर उसके रक्षण हेतु उपदेश दिये, जो कि न केवल उनकी अनुपम देन है बल्कि उन्हें तत्कालीन गुरुओं से पृथक भी करती है।

जाम्भोजी के बाद विश्नोई पंथ को संभालकर सुव्यवस्थित करने का कार्य संत विल्होजी ने किया। संत विल्होजी की वाणी में हमें पर्यावरण सरंक्षण के प्रति गहरा आग्रह देखने को मिलता है। वे पौराणिक आख्यानों को आधार बनाकर पर्यावरण के मूल तत्त्व 'वृक्ष' को न काटने की बात बार–बार दोहराते हैं, क्योंकि वे प्रकृति को ब्रह्म सदृश्य स्वीकार करते हुए कहते है –

**वृक्ष आदि स्थावर सब सृष्टि, ब्रह्म रूप यह जान समष्टि।**

वील्होजी के अनुसार हरे वृक्षों को काटना पाप की शुरूआत है –

**रूषं विरष रो पावै थंभ, पाप तणौ मांडै आरंभ।**

जथा निर्दयी होकर हरे वृक्षों को काटने वाला अंततः नरक में जाता है –

**दयाहीन काटी वणराय, जीव असष दह्या दुह लाए।**

जाम्भोजी की विचारधारा को आगे बढ़ाते हुए संत विल्होजी ने वृक्षों की रक्षा हेतु मरने तक का आदेश देकर जाम्भोजी द्वारा प्रशस्त मार्ग को कठोरता के साथ लागू करवाया–

**जीव दया नित राख, पाप नहीं कीजियै।**
**जांडी हिरण संहार देख, सिर दीजियै।।**

जाम्भाणी साहित्यकारों की एक सुदीर्घ परम्परा रही हैं। इस परम्परा के सभी कवि देदीप्यमान नक्षत्रों की भांति साहित्यकाश में प्रकाशमान हैं। इन्हीं में 19वीं सदी के संत साहबरामजी हुए। वे न सिर्फ संत थे बल्कि उच्चकोटि के साहित्यकार भी थे। उन्होंने विश्नोई पंथ के महापुराण 'जम्भसार' की रचना की, जिसका लेखन आपने संवत् 1908 में आरंभ किया, जो संवत् 1924 में पूर्ण हुआ, जो इनकी ख्याति का आधार–स्तम्भ सिद्ध हुआ। दोहा–चौपाई शैली में रचित इस विशाल ग्रंथ में गुरु जाम्भोजी के जीवन–वृत्त, उनकी प्रेरणादायी पर्यावरण संरक्षण की वाणी को विषय बनाया गया है।

संत साहबरामजी ने जम्भसार में विश्नोई धर्म की बिखरी साहित्यिक धरोहर को एकत्र करने के साथ–साथ अपनी मौलिकता का भी परिचय दिया है। विश्व प्रसिद्ध 'खेजड़ली–बलिदान कथा' की भावप्रवण अभिव्यक्ति साहबरामजी की बेजोड़ कवित्व शक्ति की परिचायक है। 'मरुभूमि की तुलसी' अर्थात् खेजड़ी की रक्षार्थ संवत् 1987 में अनेक स्त्री–पुरुषों ने अपने प्राण त्याग दिए–

**"सतरासै सतियासियै वारा। दसमी कहियै मंगलवारा।**
**भादवा सुध मैं साधू खड्या। खरतर खांडै धारही चड़या।"**

वृक्षों के लिए अपने प्राणों की आहुति देने की यह घटना विश्व–विख्यात है। आज भी प्रतिवर्ष राजस्थान के खेजड़ली ग्राम में उक्त दिन 'वृक्ष–मेला' आयोजित किया जाता है। इतिहास में घटित इस रक्त रंजित घटना पर संत साहबराम जी लिखते है कि–

**"जब विश्नोई बोल्या ऐसै। वाणीं कारणै देवां केसै।**

**पान पडंतै नर पड ज्यायसीं। रूक्ष रूख माणस खड़ ज्यायसी।"**

खेजड़ली की इस अविस्मरणीय घटना में अमृतादेवी, दामां, चीमां, इमरती, चाचो, अणदो चौधरी समेत 363 स्त्री–पुरूषों ने वृक्षों से लिपटकर उनकी कटाई को रोकने हेतु अपने प्राणों को न्योछावर कर दिया। जम्भसार में खेजड़ली घटना के अतिरिक्त समासड़ी में करमां, गौरा की बलिदान–कथा और तिलासुणी में खेजड़ी की रक्षार्थ खिंवणी खोखर, मोटाजी एवं नैतू नैण की बलिदान–कथा और पोलावास में बूचो जी ऐचरा की बलिदान–गाथा का वर्णन भी प्राप्त होता है। इस प्रकार जम्भसार साहबरामजी की विश्नोई पंथ को ही नहीं वरन् साहित्य–जगत् को अमूल्य देने है। जम्भसार में निरूपित प्रकृति–चेतना गंभीर, दूरगामी, उत्कृष्ट एवं अनुकरणीय हैं।

इस प्रकार जाम्भोजी ने पर्यावरण मूल्यों की स्थापना की और वील्होजी ने तथा साहबरामजी ने जाम्भोजी की शिक्षाओं और उनके आदर्शों को बड़े ही अनुशासनात्मक ढंग से पुनः स्थापित किया। अतः जिस पर्यावरण रक्षक धर्म की जड़ जाम्भोजी थे, वील्होजी और साहबरामजी उसके स्तम्भ थे और शेष साधु संत शाखाओं के समान थे। इनके बाद आने वाले कवियों में रहीम का लेखन प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष रूप से पर्यावरण संरक्षण पर बल देता है। रहीम ने पानी के उदाहरण से जीवन के तत्त्वों का और पर्यावरण का ज्ञान कराया है –

**रहिमन पानी राखिए बिन पानी सब सुन।**
**पानी गए न ऊबरे मोती मानुष चुन।।**

भक्तिकाल के कवि कबीरदास, सूरदास, तुलसीदास आदि ने अपनी रचनाओं में प्रकृति का रहस्यमयी वर्णन किया है। इनका लेखन कहीं न कहीं प्रकृति के प्रति एक निर्मल दृष्टि रखता है। सूरदास का तो पूरा का पूरा साहित्य ही प्रकृति की गोद में ही फलता–फूलता है। बिना प्रकृति के सूर–काव्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती। हालांकि इनके काव्य में कहीं पर्यावरण विमर्श या उसको बचाने की बात नहीं कही गयी है किन्तु प्रकृति के प्रति मात्र उपयोगितावादी दृष्टि न रखकर इन कवियों ने उसके प्रति जो एकात्म भाव दिखाया है, वो उसके संरक्षण की तरफ बढ़ाया गया पहला कदम प्रतीत होता है। विद्यापति की पदावली में प्रकृति वर्णन है। जायसी की रचनाओं में प्रकृति का कई स्थलों पर रहस्यात्मक वर्णन हुआ है। महाकवि तुलसीदास जी ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ रामचरितमानस में प्रकृति और पर्यावरण का अद्भुत वर्णन किया है। रामचरितमानस के किष्किंधा कांड में तुलसीदास जी लिखते है –

**"क्षिति जल पावक गगन समीरा**
**पंच रचित अति अधम सरीरा"**

तुलसी की रामचरितमानस का अशोक वाटिका प्रसंग हो या चित्रकूट प्रसंग सब में प्रकृति की महिमा बताई गई है। रामचरितमानस में राम–सीता लक्ष्मण को वृक्षारोपण करते हुए दिखाया है, जो वृक्ष के महत्त्व को दर्शाता है। इस संबंध में एक पंक्ति है –

**तुलसी तरूवर विविध सुहाए, कहुं, कहुं सीया कहुं लखन लगाएं।**

आदिकाल, भक्तिकाल से आगे बढ़े और रीतिकाल पर दृष्टिपात करें, तो हम पाते है कि रीतिकाल में आकर काव्य की विषयवस्तु संकुचित हो गई क्योंकि काव्य राजाश्रित हो गया और नारी रूप चित्रण पर केन्द्रित

हो गया, हालांकि सेनापति जैसे कुछ कवियों ने यत्र–तत्र स्वतंत्र प्रकृति चित्रण अवश्य किया। आधुनिक युग में आकर स्थिति बदली। भारतेन्दु युग से होते हुए कविता जहाँ द्विवेदी युग से छायावादी युग में प्रवेश करती है तो पर्यावरण संबंधी चर्चा में एक गुणात्मक अंतर देखने को मिलता है। निराला, पंत, वर्मा आदि ने अपने काव्य में प्रकृति के सौन्दर्य रूप के दर्शन कराए हैं। कवि जयशंकर प्रसाद ने कामायनी महाकाव्य में प्रकृति के अद्भुत रूप का वर्णन किया है। यथा –

**हिमगिरी के उत्तुंग शिखर पर बैठ शीला की उपर छांह।**
**एक पुरुष भीगे नैनो से देख रहा है प्रलय प्रवाह।।**

छायावादी काव्य में प्रकृति का सुखी और उत्कट रूप दिखाई देता है। श्रीधर पाठक के प्राकृतिक दृश्यों के चित्र सर्वविदित हैं। कोई आश्चर्य नहीं है कि वहीं से हिन्दी में स्वच्छंदतावादी काव्य की एक धारा शुरू होती है, जो आगे चलकर छायावाद नाम से अभिहित की जाने लगी। आगे चलकर प्रगतिवादी युग में प्रकृति के थोड़े साफ–स्वच्छ चित्र देखने को मिलते है। नए कवियों में अज्ञेय ने इस दिशा में बेहतर कार्य किया। प्रकृति प्रेमी महान कवि अज्ञेय ने अपनी कविता 'हरी घास पर क्षण भर' में प्रकृति का वर्णन किया है। अज्ञेय का प्रकृति के साथ गहरा संवेदनात्मक संबंध है। कुंवर नारायण ने भी अपनी कविताओं में प्रकृति के महत्त्व को स्वीकार किया है। यथा –

**कितना स्पष्ट होता आगे बढ़ते जाने का मतलब**
**अगर दसों दिशाएँ हमारे सामने होती,**
**हमारे चारों ओर नहीं।**

साठोत्तरी एवं समकालीन हिन्दी कविता में प्रकृति व पर्यावरण विमर्श ज्यादा मुखर रूप में सामने आया। केदारनाथ सिंह और राजेश जोशी का काव्य इस सन्दर्भ में विशेष उल्लेखनीय है। आधुनिक काल में हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंध 'कुटज' में लिखा है –"यह धरती मेरी माता है और मैं इसका पुत्र हूँ इसीलिए मैं सदैव इसका सम्मान करता हूँ और मेरी धरती माता के प्रति नतमस्तक हूँ।" इस तरह आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक में पर्यावरण दृश्य हमें हिन्दी साहित्य में दिखाई पड़ते हैं। वैसे, समकालीन दौर में आए पर्यावरणीय विचार से यह अलग है क्योंकि आधुनिक काल से पहले जो पर्यावरण के संबंध में हमारे साहित्य में लिखा गया, वह पर्यावरण–विमर्श के तहत नहीं लिखा गया, वहाँ मात्र उद्दीपन या आलंबन रूप में प्रकृति–चित्रण हुआ है। समकालीन दौर में जो साहित्य लिखा जा रहा है, उसमें पर्यावरण विमर्श सम्मिलित है। इस पर्यावरण विमर्श को जन्म दिया पर्यावरण के असंतुलन ने। इस संकट काल में अनेक कवियों ने चिंता व्यक्त की है। आज के बढ़ते तकनीकी एवं औद्योगीकरण के जीवन में त्रिलोचन, केदारनाथ सिंह, अरूण कमल, ज्ञानेन्द्रपति, अशोक वाजपेयी, शिशुपाल सिंह जैसे कवियों ने अपनी कविताओं में इस तथ्य को बखूबी उभारने की कोशिश की है। ये कवि पर्यावरण प्रदूषण की समस्या को एक गंभीर विषय के रूप में अपनाकर, आज की ज्वलंत समस्या पर्यावरण–प्रदूषण का चित्रण अपनी रचनाओं में करके हमारे बीच जागरूकता फैलाते हैं।

हिन्दी के वरिष्ठ कवि ज्ञानेन्द्रपति ने भी अपनी अनेक कविताओं में पर्यावरण प्रदूषण के बढ़ते आतंक का चित्रण किया है। इनके 'गंगातट' काव्य संग्रह की एक कविता है 'गंगास्नान'। जिसमें कवि ने एक बूढ़ी,

जर्जर स्त्री की गंगास्नान की आखिरी इच्छा को चित्रित किया है। इस बूढ़ी, जर्जर स्त्री के मन में गंगा के प्रति अथाह आस्था है लेकिन कवि का मन मानने का तैयार नहीं है क्योंकि आज गंगा मलिन है।

''वह बूढ़ी मैया.....
अपने प्राणों तक को प्रक्षालित कर रही है, पवित्र कर रही है
महाप्रस्थान–प्रस्तुत, डगमग पांवों वाली वह बूढ़ी मैया,
तुम क्या जानों, क्योंकि तुम्हारे लिए नहीं बची है कोई पवित्र नदी
तुम्हारी सारी नदियाँ अपवित्र हो गई है – विषाक्त
तुम्हारे हत्पिंड की गंगोत्री सूख ही गई है
पीछे और पीछे खिसकती, आखिरकार''

नदियों को प्रदूषित होता देख ज्ञानेन्द्रपति ने 'गंगातट' काव्य संग्रह की ही एक और कविता 'नदी और साबनु' में भी नदी को लेकर चिन्ता जताई है।

पोलिथिन के बेहद उपयोग व उनसे होने वाली समस्याओं को लीलाधर मंडलोई ने 'पोलिथिन की थैलियाँ' शीर्षक कविता में बताया है। कवि ने पोलिथिन से उत्पन्न भयावह त्रासदी की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया है। इस समस्या का चित्रण कुछ इस तरह किया है –

''करोड़ों या अरबो
कितनी हो सकती है
पोलिथिन की थैलियाँ
कितनी नदियों का दम घुट सकता है
इन थैलियों में
पोलिथिन! पोलिथिन!
तंग हूँ मैं इन पोलिथिन से।''

कथा साहित्य की बात करें तो मेहता नगेन्द्र की पर्यावरण चेतना और जागरूकता से संबंधित एक लघुकथा है – 'वृक्ष ने कहा'। इसमें यह बताया गया है कि एक बरगद के वृक्ष ने किस प्रकार लोगों को यह सीख दी कि हरे–भरे कोमल वृक्षों को काटा जाना किसी भी प्रकार उचित नहीं है, चाहे उसकी लकड़ियाँ पूजा–अर्चना के कार्य में ही क्यों ना लाई गई हो। बंजर जमीन को उपजाऊ बनाकर किस प्रकार हम उसमें वृक्षारोपण कर अपनी आर्थिक स्थिति को अच्छी कर सकते है तथा दूसरों की भी मदद कर सकते है; इसको भी इस लघु कथा में बताया गया है। परोपकार की भावना के साथ एक वृक्ष किस प्रकार दधिचि वृक्ष बन गया, इसका विवेचन भी उनकी एक लघुकथा किया गया है, जिसका शीर्षक है – 'वृक्ष–दधीचि'।

श्री कमलेश्वर का 'अनबीता व्यतीत' नामक उपन्यास, जो हिन्दी उपन्यास यात्रा का एक पड़ाव है। इसमें वर्तमान सांसारिक जीवन की एक बड़ी भयानक सामाजिक समस्या, पर्यावरण प्रदूषण को केन्द्र में रखा गया है। अपने–आप में अनूठे इस उपन्यास में मनुष्य और अन्य जीव–जन्तुओं के बीच सम्पर्क की अनिवार्यता का वर्णन बड़े सुन्दर ढंग से किया गया है। इससे पहले हम इस उपन्यास को हिन्दी उपन्यास जगत् में एक

नयी परीक्षणात्मक पहल कह सकते हैं। दूसरे जीव–जन्तुओं के प्रति दया, करूणा और ईश्वरीय दृष्टिकोण अंकित करने वाला हिन्दी का पहला अनूठा उपन्यास है, 'अनबीता व्यतीत'।

**निष्कर्ष :–**

हिन्दी साहित्य पर यदि समग्रतः दृष्टिपात किया जाए तो उसमें पर्यावरण संरक्षण एवं प्रकृति प्रेम की एक लम्बी परम्परा देखने को मिलती है। भक्तिकालीन संतों के जीवन दर्शन और उनकी वाणी में ईश्वर उन्मुखता, सामाजिक समरसता के साथ पर्यावरण संरक्षण की भी चिंता आभासित होती है। संत जाम्भोजी और उनके शिष्यों के उपदेश, वाणी और समग्र जीवन दर्शन में पेड़, जीव, पर्यावरण संरक्षण के बारे में विस्तार से प्रकाश डाला गया है। उनके अनुयायियों विल्होजी, साहबराम जी ने जांभाणी साहित्य को बढ़ाया। जाभाणी साहित्य में प्राकृतिक समस्याओं से बचने के लिए अनेक उपाय दिए हुए है। हिन्दी साहित्य में आदि काल से लेकर आधुनिक काल तक प्रकृति–पर्यावरण और उनके संरक्षण को हमेशा विशिष्ट स्थान मिला है। भारतीय संस्कृति, सभ्यता एवं जीवन दर्शन केन्द्रित हिन्दी ग्रंथों में भी मानव सभ्यता पर ही नहीं बल्कि जीव–जन्तु, प्रकृति–चेतना और पर्यावरण संरक्षण पर अथाह साहित्य उपलब्ध है। आज का युग वैज्ञानिक युग है लेकिन प्राकृतिक समस्याओं का समाधान हमें विज्ञान के साथ–साथ साहित्य में भी मिलता है।

**सन्दर्भ सूची**


1. विल्होजी की वाणी – सं. कृष्णलाल विश्नोई, पृ.सं. 231 (बतीसआखड़ी–छं.सं. 9)
2. जम्भ ज्योति – वर्ष 25, अंक 2, अक्टूबर 2016, पृ.सं. 24 (जम्भाणी साहित्य में प्रकृति संबंधी मूल्य–रामस्वरूप)
3. वील्होजी की वाणी – सं. कृष्णलाल विश्नोई, पृं.सं. 5 (कथा जानकारी, छं.सं. 22)
4. वही, पृ.सं. 10 (कथाज्ञानचरी, छं.सं. 51)
5. जम्भसार (भाग–1) – संपादक स्वामी कृष्णानन्दजी आचार्य – प्रकाशक स्वामी आत्मप्रकाश 'जिज्ञासु' – द्वितीय संस्करण, 2002, पृ.सं. 250
6. वही, पृ.सं. 251
7. हजारी प्रसाद द्विवेदी, कुटज (निबंध), पृं.स. 32
8. समकालीन हिन्दी साहित्य में पर्यावरण विमर्श, सं. डॉ. ए.ऐस. सुमेषु पृं.सं. 28
9. 'वृक्ष ने कहा', मेहता नगेन्द्र सिंह, पृं.सं. 7
10. धरती की पाती, वही, पृं.सं. 28